Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

कृष्ण-काव्य के शृंगार एवं भक्ति-भाव का कथक नृत्य में भावाभिनय और रस-निष्पत्ति के माध्यम से प्रकटीकरण।

प्रियंका पौडेल
(शोधार्थी), नृत्य विभाग, बरकतुल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल, मध्य प्रदेश।
डॉ. विजया शर्मा (
विभागाध्यक्ष), नृत्य विभाग, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, बरकतुल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल, मध्य प्रदेश।

DOI: https://doi.org/10.65578/kavyasetu.v2.i11.411

सार
भारतीय शास्त्रीय कलाओं में साहित्य, संगीत, देहगत अभिव्यक्ति और आध्यात्मिक अनुभूति का परस्पर सम्बन्ध विशिष्ट सौन्दर्यात्मक अनुभव का निर्माण करता है। कृष्ण-काव्य और कथक नृत्य का अन्तर्सम्बन्ध इसी समन्वय का महत्त्वपूर्ण उदाहरण है। सूरदास, जयदेव, मीराबाई और रसखान जैसे कवियों की रचनाओं में अनुराग, मान, संयोग, विप्रलम्भ, प्रतीक्षा, स्मृति, आत्मनिवेदन तथा आराध्य के प्रति समर्पण जैसी भावात्मक अवस्थाएँ विविध रूपों में व्यक्त हुई हैं। कथक की अभिनयपरक परम्परा इन काव्यगत संवेदनाओं को दृष्टि-विन्यास, मुखाभिनय, हस्तमुद्रा, देह-स्थिति, गतिभेद, लय और संगीत के माध्यम से दृश्य तथा अनुभूति-प्रधान रूप प्रदान कर सकती है। प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य कृष्ण-काव्य में शृंगार और भक्ति-भाव की संरचना का विश्लेषण करना तथा कथक में उनके नृत्यात्मक प्रकटीकरण को भरतमुनि के रस-सिद्धान्त और अभिनवगुप्त की रसास्वादन-सम्बन्धी व्याख्या के आलोक में समझना है। अध्ययन वर्णनात्मक, पाठ-आधारित, विश्लेषणात्मक और सैद्धान्तिक पद्धति पर आधारित है। इसमें संयोग और विप्रलम्भ शृंगार, चार प्रकार के अभिनय, विभाव-अनुभाव-संचारी भावों के समन्वय तथा दर्शक की सहृदयता की भूमिका का विवेचन किया गया है। अध्ययन का प्रमुख निष्कर्ष है कि कथक में भावाभिनय की प्रभावकारिता केवल मुद्राओं की संख्या या बाह्य प्रदर्शन पर निर्भर नहीं करती; वह काव्य-पाठ की समझ, भावों के क्रमिक विकास, संगीत-लय के अनुकूलन और प्रस्तुति की आन्तरिक संगति से निर्मित होती है। साथ ही, शृंगार-रस और भक्ति-भाव के सम्बन्ध को स्वीकार करते हुए दोनों की सैद्धान्तिक तथा ऐतिहासिक विशिष्टताओं को पृथक् पहचानना आवश्यक है।

प्रमुख शब्द : कृष्ण-काव्य, कथक, शृंगार रस, भक्ति-भाव, भावाभिनय, रस-निष्पत्ति, राधा-कृष्ण, संयोग शृंगार, विप्रलम्भ शृंगार, सहृदयता।

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

1. प्रस्तावना

भारतीय कलादर्शन में कला को केवल मनोरंजन अथवा तकनीकी कौशल के प्रदर्शन के रूप में नहीं देखा गया है; वह संवेदना, कल्पना, सांस्कृतिक स्मृति और आत्मानुभूति को रूप देने वाली सृजनात्मक प्रक्रिया भी है। काव्य और नृत्य के बीच सम्बन्ध इसी प्रक्रिया में विकसित होता है। काव्य शब्द, लय, बिम्ब और अर्थ के माध्यम से भाव-संसार रचता है, जबकि नृत्य शरीर, गति, मुद्रा, दृष्टि और संगीत के सहारे उस भाव-संसार को मंच पर मूर्त करता है। कृष्ण-काव्य और कथक का सम्बन्ध इसलिए महत्त्वपूर्ण है कि यहाँ साहित्यिक कथ्य नृत्यात्मक संकेतों में रूपान्तरित होकर दर्शक के लिए बहुस्तरीय अनुभव बनता है।

कृष्ण भारतीय सांस्कृतिक चेतना में बाललीला, मुरली-माधुर्य, राधा-कृष्ण अनुराग, गोपी-भाव, विरह और भक्तिपरक समर्पण के केंद्र में उपस्थित हैं। विभिन्न कवियों ने कृष्ण के व्यक्तित्व और लीलाओं को अपनी भाषा, भक्ति-दृष्टि और काव्य-प्रवृत्ति के अनुसार रूपायित किया है। जयदेव के गीतगोविन्द में प्रेम, मान, विरह और पुनर्मिलन की गीतात्मक संरचना प्रमुख है; सूरदास की काव्य-परम्परा में बाललीला, गोपी-अनुराग और विरह की भाव-सम्पन्नता दिखाई देती है; मीराबाई की पदावली में आत्मनिवेदन और अनन्य भक्ति का स्वर उभरता है; रसखान के काव्य में कृष्ण तथा ब्रजभूमि के प्रति अनुरक्ति विशिष्ट सांस्कृतिक आत्मीयता ग्रहण करती है। इन सभी काव्य-परम्पराओं को एक ही भाव-सूत्र में सीमित करने के बजाय उनकी अलग-अलग विशेषताओं को समझना आवश्यक है।

कथक में कृष्ण-काव्य का विनियोग प्रायः भाव, ठुमरी, पद, भजन, कवित्त अथवा लीला-आधारित प्रस्तुति के माध्यम से होता है। यहाँ कलाकार को शब्दार्थ, प्रसंग, पात्रों की मनःस्थिति और भाव-परिवर्तन को समझते हुए शरीर की भाषा विकसित करनी होती है। यदि अभिनय केवल परिचित संकेतों—जैसे मुरली बजाना, मुकुट दिखाना या विरह में अश्रु का अभिनय करना—तक सीमित रह जाए, तो काव्य की मनोवैज्ञानिक जटिलता और सौन्दर्यात्मक सम्भावना संकुचित हो सकती है। जब अभिनय भाव के क्रमिक विकास और प्रसंग की आन्तरिक संगति के अनुसार संयोजित होता है, तब काव्यगत अनुभूति अधिक प्रभावी रूप में प्रकट होती है।

2. अध्ययन की समस्या, उद्देश्य एवं शोध-प्रश्न

इस अध्ययन की मूल समस्या यह है कि कृष्ण-काव्य में निहित शृंगारात्मक और भक्तिपरक संवेदनाएँ कथक की अभिनय-भाषा में किस प्रकार रूपान्तरित होती हैं तथा इस रूपान्तरण में रस-सिद्धान्त की अवधारणाएँ किस सीमा तक विश्लेषणात्मक आधार प्रदान करती हैं। समस्या का दूसरा पक्ष शृंगार और भक्ति के अन्तर्सम्बन्ध से जुड़ा है: दोनों कई कृष्णभक्ति परम्पराओं में परस्पर सम्बद्ध हैं, फिर भी उन्हें बिना भेद के समानार्थी मानना सैद्धान्तिक रूप से उचित नहीं होगा।

2.1 अध्ययन के उद्देश्य

• कृष्ण-काव्य में शृंगार तथा भक्ति-भाव की प्रमुख भावात्मक संरचनाओं का विश्लेषण करना।

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

• कथक की अभिनयपरक परम्परा में कृष्ण-काव्य के विनियोग और उसकी नृत्यात्मक सम्भावनाओं का विवेचन करना।
• अंगिक, वाचिक, आहार्य और सात्त्विक अभिनय के माध्यम से काव्यगत भावों के प्रकटीकरण को समझना।
• संयोग तथा विप्रलम्भ शृंगार की अभिव्यंजना में राधा-कृष्ण प्रसंगों की भूमिका का विश्लेषण करना।
• भरतमुनि के रस-सिद्धान्त और उत्तरवर्ती भक्ति-रस चिन्तन के बीच सम्बन्ध तथा वैचारिक अन्तर स्पष्ट करना।
• कथक में कृष्ण-काव्य के साहित्यिक, सौन्दर्यात्मक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक महत्त्व का प्रतिपादन करना।

2.2 शोध-प्रश्न

• कृष्ण-काव्य की भावात्मक संरचना कथक के अभिनय-विन्यास को किस प्रकार प्रभावित करती है?
• विभाव, अनुभाव और संचारी भावों का समन्वय मंचीय रसाभिव्यक्ति में किस प्रकार कार्य करता है?
• संयोग और विप्रलम्भ शृंगार के अभिनय में कौन-से प्रमुख अभिव्यक्तिगत अन्तर उभरते हैं?
• शृंगार और भक्ति के अन्तर्सम्बन्ध को समझते समय किन सैद्धान्तिक सावधानियों की आवश्यकता है?

3. शोध-पद्धति, सामग्री और सीमाएँ

यह अध्ययन गुणात्मक, वर्णनात्मक, पाठ-आधारित और सौन्दर्यशास्त्रीय विश्लेषण की पद्धति अपनाता है। इसमें नाट्यशास्त्रीय रस-चिन्तन, कृष्णभक्ति साहित्य और कथक की अभिनयपरक संरचना को अन्तःविषयक दृष्टि से पढ़ा गया है। प्रमुख आधारों में भरतमुनि का नाट्यशास्त्र, जयदेव का गीतगोविन्द, सूरदास की काव्य-परम्परा, मीराबाई की पदावली, रसखान की कृष्ण-विषयक रचनाएँ तथा भगवद्गीता के प्रासंगिक दार्शनिक विचार सम्मिलित हैं। अभिनवगुप्त की रसास्वादन-सम्बन्धी व्याख्या को भी विश्लेषणात्मक संदर्भ के रूप में ग्रहण किया गया है।

यह प्राथमिक क्षेत्र-सर्वेक्षण, प्रयोगात्मक हस्तक्षेप अथवा दर्शक-अध्ययन नहीं है। अतः यहाँ प्रस्तुत निष्कर्ष पाठ और सिद्धान्त के विश्लेषण से निकले सैद्धान्तिक निष्कर्ष हैं; इन्हें सांख्यिकीय परिणाम, सार्वभौमिक दर्शक-प्रतिक्रिया अथवा किसी विशिष्ट नृत्य-प्रस्तुति की प्रभावशीलता का प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं माना जाना चाहिए। कृष्णभक्ति साहित्य के अनेक ग्रन्थों में पाण्डुलिपि, सम्पादन और मुद्रित संस्करणों के आधार पर पाठान्तर मिलते हैं। इसलिए किसी पद या श्लोक का शब्दशः उद्धरण देते समय प्रयुक्त संस्करण, पदांक/सर्ग/श्लोक और उपलब्ध होने पर पृष्ठ-संख्या सत्यापित करना आवश्यक है। इस संशोधित पाठ में अप्रमाणित पृष्ठ-संख्याएँ जोड़ने के बजाय ग्रन्थ-स्तरीय संदर्भों को प्राथमिकता दी गई है।

4. कृष्ण-काव्य में शृंगार रस की सौन्दर्यपरक संरचना

भारतीय काव्यशास्त्र में शृंगार रस का स्थायी भाव रति माना गया है। इसकी अभिव्यक्ति केवल शारीरिक आकर्षण तक सीमित नहीं रहती, बल्कि अनुराग, संकोच, मान, प्रतीक्षा, स्मृति, उत्कण्ठा, ईर्ष्या, आत्मीयता

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

और मिलन-विरह जैसे मनोवैज्ञानिक स्तरों को भी समेटती है। कृष्ण-काव्य में राधा-कृष्ण का प्रेम कई काव्य-परम्पराओं में लौकिक प्रेमानुभूति के माध्यम से व्यापक आध्यात्मिक अर्थ ग्रहण करता है; फिर भी इस आध्यात्मिक अर्थ को प्रत्येक प्रसंग पर स्वतः आरोपित नहीं किया जाना चाहिए। अर्थ-निर्माण पाठ, परम्परा और व्याख्यात्मक दृष्टि के आधार पर होता है।

4.1 संयोग शृंगार

संयोग शृंगार में मिलन, परस्पर दृष्टि-विनिमय, हास-परिहास, मुरली का माधुर्य, रास और प्रेमपूर्ण निकटता जैसे प्रसंग महत्त्वपूर्ण होते हैं। कथक में इनका अभिनय केवल प्रसन्न मुखमुद्रा या तीव्र गति से नहीं बनता; उसमें दृष्टि का क्रम, क्षणिक संकोच, देह की दिशा, लय के साथ प्रतिक्रिया और पात्रों के बीच कल्पित सम्बन्ध का संयोजन आवश्यक है। उदाहरणार्थ, प्रथम दृष्टि-संपर्क के प्रसंग को आकस्मिक दृष्टि-मिलन, दृष्टि हटाने, पुनः देखने और मुखमुद्रा में धीरे-धीरे उभरते अनुराग के क्रम से विकसित किया जा सकता है। लज्जा, औत्सुक्य, हर्ष और चपलता जैसे संचारी भाव स्थायी भाव रति को पुष्ट कर सकते हैं।

4.2 विप्रलम्भ शृंगार

विप्रलम्भ शृंगार में प्रिय की अनुपस्थिति स्मृति, प्रतीक्षा, उत्कण्ठा, मान, व्याकुलता और विषाद का भाव-क्षेत्र निर्मित करती है। कृष्ण-विरह के प्रसंगों में मुरली की स्मृति, पूर्व-मिलन का पुनर्स्मरण और आगमन की प्रतीक्षा अनुपस्थिति को भावात्मक रूप से उपस्थित कर सकते हैं। कथक में दूरस्थ बिन्दु पर दृष्टि टिकाना, गति को क्रमशः मन्द करना, देह-स्थिति में शिथिलता, मुखमुद्रा के सूक्ष्म परिवर्तन और संगीत की गति के अनुरूप ठहराव रिक्तता का संकेत दे सकते हैं। विरह की प्रभावशीलता अतिरंजित रुदन से नहीं, बल्कि स्मृति और वर्तमान अभाव के बीच तनाव को विश्वसनीय रूप से प्रस्तुत करने से उत्पन्न होती है।

संयोग और विप्रलम्भ को एक-दूसरे से पूर्णतः पृथक् भाव-जगत के रूप में देखना पर्याप्त नहीं है। कई काव्य-प्रसंगों में विरह प्रेम की तीव्रता को बढ़ाता है, जबकि मिलन के भीतर भी संकोच, आशंका या पुनः-वियोग की सम्भावना बनी रह सकती है। इसलिए कथक में भाव-निर्माण को स्थिर मुद्राओं की सूची के बजाय भावों के क्रमिक संक्रमण के रूप में समझना अधिक उपयुक्त है। जयदेव के गीतगोविन्द में मान, विरह, अभिसार और पुनर्मिलन की गीतात्मक संरचना इस दृष्टि से विशेष रूप से उपयोगी है (जयदेव, 1984)।

5. कृष्ण-काव्य में भक्ति-भाव और आध्यात्मिक अर्थवत्ता

कृष्णभक्ति साहित्य में प्रेम का आध्यात्मिक रूपान्तरण एक महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति है। भक्त और आराध्य का सम्बन्ध श्रद्धा के अतिरिक्त आत्मीयता, अनुराग, विरह, समर्पण और तन्मयता के रूप में भी व्यक्त हो सकता है। तथापि, भक्ति की विविध परम्पराओं को एक ही सूत्र में समेटना उचित नहीं है; प्रत्येक कवि की काव्य-दृष्टि, धार्मिक पृष्ठभूमि और साहित्यिक विधा का पृथक् परीक्षण आवश्यक है।

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः॥

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

भावार्थ: मन को मुझमें स्थिर करो, मेरे भक्त बनो, मेरी उपासना करो और मुझे प्रणाम करो। इस प्रकार मुझमें अनुरक्त होकर साधक परम लक्ष्य की ओर अग्रसर होता है। (भगवद्गीता, 9.34)

यह श्लोक भक्ति में मन की एकाग्रता, आराध्य के प्रति अनुराग और समर्पण को स्पष्ट करता है। कथक में इसका भावाभिनय बाह्य धार्मिक संकेतों तक सीमित न रहकर दृष्टि, देह-स्थिति, संयत हस्त-विन्यास और आन्तरिक तन्मयता के समन्वय से प्रस्तुत किया जा सकता है।

भगवद्गीता 9.34 में मन को ईश्वर में एकाग्र करने, भक्ति, उपासना और प्रणाम के माध्यम से समर्पण की बात कही गई है। यह श्लोक भक्ति और एकाग्रता के दार्शनिक आधार को स्पष्ट करता है; इसे राधा-कृष्ण के किसी विशिष्ट काव्य-पद का स्रोत नहीं समझना चाहिए। इसी प्रकार गीता 2.69 का संदर्भ आध्यात्मिक दृष्टि और सामान्य दृष्टि के अन्तर को रेखांकित करता है, पर वह प्रत्यक्षतः राधा-विरह का काव्य-स्रोत नहीं है। ऐसे ग्रन्थ-संदर्भों का उपयोग तुलनात्मक दार्शनिक व्याख्या के लिए किया जाना चाहिए, न कि काव्य-पाठ के प्रत्यक्ष प्रमाण के रूप में।

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥

भावार्थ:

जो साधक अनन्य भाव से मेरा चिंतन और उपासना करते हैं, उनके योगक्षेम अर्थात् आवश्यकताओं की पूर्ति और संरक्षण का भार मैं वहन करता हूँ। (भगवद्गीता, 9.22)

इस श्लोक का उपयोग भक्ति-साहित्य में विश्वास और समर्पण की दार्शनिक पृष्ठभूमि समझने के लिए किया जा सकता है; इसे सूरदास, मीराबाई अथवा रसखान के किसी विशिष्ट पद का मूल स्रोत नहीं माना जाना चाहिए।

सूरदास की काव्य-परम्परा में कृष्ण-लीला, गोपी-अनुराग और विरह की भावात्मक विविधता मिलती है; मीराबाई की पदावली में अनन्य भक्ति और आत्मनिवेदन का स्वर प्रमुख है; रसखान के काव्य में कृष्ण और ब्रजभूमि के प्रति अनुरक्ति का विशिष्ट रूप दिखाई देता है। कथक में इन कवियों की रचनाओं का विनियोग करते समय भक्ति को केवल धार्मिक मुद्रा या बाहरी प्रतीक तक सीमित नहीं करना चाहिए। भाव की आन्तरिक निरन्तरता, शब्दार्थ और काव्य-प्रसंग के साथ देह-भाषा का सम्बन्ध अधिक निर्णायक होता है।

6. रस-सिद्धान्त और कथक में रस-निष्पत्ति

भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में रस-निष्पत्ति का प्रसिद्ध सूत्र है—

"**विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः**"

(नाट्यशास्त्र, अध्याय 6)।

इसका आशय है कि विभाव, अनुभाव और व्यभिचारी अथवा संचारी भावों के समन्वय से रसात्मक अनुभूति सम्भव होती है। रस किसी एक मुद्रा, भाव-चिह्न या तकनीकी क्रिया का यांत्रिक परिणाम नहीं है; वह नाट्य-

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

प्रस्तुति के विभिन्न तत्त्वों के समन्वित प्रभाव से सहृदय दर्शक में विकसित होने वाला सौन्दर्यात्मक अनुभव है।

6.1 विभाव का कथकात्मक विन्यास

विभाव भाव को जाग्रत या उद्दीप्त करने वाले आधार हैं। परम्परागत विवेचन में आलम्बन और उद्दीपन विभाव का भेद किया जाता है। कृष्ण-काव्य पर आधारित कथक में राधा और कृष्ण आलम्बन विभाव के रूप में प्रस्तुत हो सकते हैं, जबकि यमुना-तट, वृन्दावन, मुरली की ध्वनि, चन्द्रप्रकाश, वसन्त अथवा रास का परिवेश उद्दीपन विभाव की भूमिका निभा सकता है। इन संकेतों का प्रभाव उनके प्रसंगानुकूल चयन और संयोजन पर निर्भर करता है। केवल प्रतीकों का प्रदर्शन पर्याप्त नहीं; उन्हें भाव के विकास में कार्य करना चाहिए।

6.2 अनुभाव और भावाभिनय

अनुभाव वे बाह्य अभिव्यक्तियाँ हैं जिनके माध्यम से पात्र की आन्तरिक मनःस्थिति दर्शक के लिए ग्राह्य होती है। कथक में दृष्टि-विन्यास, भौंहों का संचालन, मुखमुद्रा, हस्तमुद्रा, ग्रीवा-संचालन और देह-स्थिति इसके प्रमुख उपकरण हैं। उदाहरणार्थ, राधा के मान को व्यक्त करने के लिए दृष्टि का विमुख होना, मुखमुद्रा में असन्तोष, देह की दिशा में परिवर्तन और संवादात्मक प्रतिक्रिया का अभाव प्रयुक्त हो सकता है। किन्तु इन संकेतों का अर्थ प्रसंग और प्रस्तुति के अनुरूप होना चाहिए; एक ही मुद्रा अलग प्रसंगों में अलग अर्थ ग्रहण कर सकती है।

6.3 संचारी अथवा व्यभिचारी भाव

उत्कण्ठा, लज्जा, स्मृति, चिन्ता, हर्ष, विषाद, औत्सुक्य और चपलता जैसे संचारी भाव स्थायी भाव को पुष्ट करते हैं। कृष्ण के आगमन की प्रतीक्षा करती राधा के अभिनय में औत्सुक्य से चिन्ता, चिन्ता से विषाद और दर्शन से हर्ष की ओर भाव-संक्रमण सम्भव है। इस क्रम को विश्वसनीय बनाने के लिए कलाकार को प्रत्येक अवस्था के बीच भावात्मक कारण और संक्रमण को स्पष्ट करना पड़ता है। यदि भाव अचानक बदलें और उनके बीच कोई नाट्यगत सम्बन्ध न हो, तो अभिनय का मनोवैज्ञानिक प्रभाव कम हो सकता है।

6.4 स्थायी भाव, रस और भक्ति-रस की अवधारणा

शृंगार का स्थायी भाव रति है। उपयुक्त विभावों, अनुभावों और संचारी भावों के समन्वय से रति रसात्मक अनुभव का आधार बनती है। दूसरी ओर, भक्ति-रस की व्यवस्थित अवधारणा उत्तरवर्ती धार्मिक और सौन्दर्यशास्त्रीय परम्पराओं में विकसित हुई। इसलिए भक्ति-रस को भरतमुनि के मूल रस-सूत्र में ऐतिहासिक भेद की उपेक्षा करते हुए समाहित करना उचित नहीं होगा। शृंगार और भक्ति में अनुभवगत साम्य हो सकता है, किन्तु उनके सैद्धान्तिक आधार और धार्मिक अर्थ-क्षेत्र अलग-अलग परम्पराओं में विशिष्ट रूप ग्रहण करते हैं।

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

7. कथक में अभिनय के चार आयाम

7.1 अंगिक अभिनय

अंगिक अभिनय में शरीर तथा उसके अंग-उपांगों द्वारा भाव और क्रिया व्यक्त की जाती है। कृष्ण की मुरली-लीला, रास-विन्यास, राधा का मान और विरहिणी की प्रतीक्षा को नेत्र, हस्त, ग्रीवा, चरण तथा सम्पूर्ण देह की गतिशीलता से प्रस्तुत किया जा सकता है। शरीर यहाँ कथा का निष्क्रिय उपकरण नहीं, बल्कि अर्थ-निर्माण की सक्रिय दृश्य-भाषा है। अंगिक अभिनय की प्रभावशीलता तभी बढ़ती है जब मुद्रा और गति पात्र की मनःस्थिति, काव्य-पंक्ति और संगीत के साथ संगत हों।

7.2 वाचिक अभिनय

पद, भजन, ठुमरी, गायन और भाषिक ध्वनि कथक की भावप्रधान प्रस्तुति को आधार देते हैं। काव्य-पंक्ति का अर्थ, ध्वन्यात्मक प्रवाह, छन्द और लय समझे बिना किया गया अभिनय यांत्रिक हो सकता है। वाचिक तत्त्व केवल बोले गए शब्दों तक सीमित नहीं; गायन की लय, स्वराघात, विराम और संगीतात्मक वातावरण भी भाव के अर्थ-निर्माण में भाग लेते हैं। जब शब्द और देह-भाषा के बीच सामंजस्य स्थापित होता है, तब काव्य की अर्थवत्ता अधिक स्पष्ट रूप में दृश्य बनती है।

7.3 आहार्य अभिनय

वेशभूषा, आभूषण, रंग-संयोजन और दृश्यात्मक उपकरण आहार्य अभिनय के क्षेत्र में आते हैं। मोरपंख, मुरली, मुकुट और पीताम्बर कृष्ण-चरित्र की सांस्कृतिक पहचान को सक्रिय कर सकते हैं। तथापि, भव्य सज्जा अपने आप में भाव की गहनता की गारंटी नहीं है। सीमित प्रतीकों के साथ भी प्रभावकारी प्रस्तुति सम्भव है, यदि वे प्रसंग के अनुरूप हों और कलाकार के अभिनय को बाधित न करें। आहार्य तत्त्वों का उद्देश्य भाव को स्पष्ट करना है, न कि उससे ध्यान हटाना।

7.4 सात्त्विक अभिनय

नाट्यशास्त्रीय परम्परा में स्तम्भ, स्वेद, रोमांच, स्वरभंग, वेपथु, वैवर्ण्य, अश्रु और प्रलय को सात्त्विक भावों से सम्बद्ध माना गया है। विरह अथवा भक्तिपरक तन्मयता की प्रस्तुति में ऐसे संकेत तभी प्रभावकारी होते हैं जब वे प्रसंग की भावात्मक आवश्यकता से मेल खाते हों। कृत्रिम रुदन, अनावश्यक कम्पन या अतिरंजना सात्त्विक अभिनय का विकल्प नहीं है। मंच पर इसकी विश्वसनीयता भाव की तैयारी, कलाकार की संवेदनात्मक समझ और समग्र अभिनय-विन्यास से जुड़ी होती है।

8. प्रमुख कृष्णभक्त कवियों की काव्य-संवेदना का कथक में विनियोग

8.1 सूरदास

सूरदास की काव्य-परम्परा में कृष्ण की बाललीलाओं, गोपियों के अनुराग और विरह की विविध अवस्थाओं का समृद्ध चित्रण मिलता है। कथक में उनके पदों का विनियोग करते समय कथात्मकता और भावात्मकता के बीच संतुलन आवश्यक है। बाललीला-प्रधान प्रसंगों में चपलता, कौतुक और वात्सल्य के संकेत महत्त्वपूर्ण हो सकते हैं, जबकि गोपी-अनुराग अथवा विरह के प्रसंगों में दृष्टि, स्मृति और भाव-संक्रमण की

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

सूक्ष्मता अधिक महत्त्व ग्रहण करती है। सूरसागर की पाठ-परम्परा में संकलनों और पाण्डुलिपियों के कारण पाठान्तर सम्भव हैं; अतः विशिष्ट पद के विश्लेषण में प्रयुक्त संस्करण और पदांक देना चाहिए (ब्रायंट, 1978)।

8.2 जयदेव

जयदेव का गीतगोविन्द राधा-कृष्ण के प्रेम, मान, विरह, अभिसार और पुनर्मिलन का गीतात्मक निरूपण करता है। इसकी अष्टपदी-परम्परा संगीत और अभिनय के लिए विशिष्ट सम्भावनाएँ प्रस्तुत करती है। कथक में किसी अष्टपदी या सर्ग का उपयोग करते समय सर्ग, गीत/अष्टपदी और श्लोक की पहचान स्पष्ट करना आवश्यक है। केवल भावात्मक समानता के आधार पर किसी प्रस्तुति को मूल पाठ का प्रत्यक्ष रूपान्तरण नहीं कहा जाना चाहिए; पाठ, संगीत-रूप और मंचीय व्याख्या के बीच सम्बन्ध स्पष्ट होना चाहिए (जयदेव, 1984; मिलर, 1977)।

8.3 मीराबाई

मीराबाई की पदावली में अनन्य भक्ति, आत्मनिवेदन, विरह और आराध्य के प्रति व्यक्तिगत आत्मीयता का स्वर मिलता है। उनकी काव्य-संवेदना कथक में बाह्य लीला-वर्णन से अधिक आन्तरिक समर्पण और भावात्मक एकाग्रता को केंद्र में लाने की सम्भावना रखती है। किन्तु मीराबाई के पदों के संकलनों में पाठान्तर मिल सकते हैं; इसलिए किसी पद का प्रत्यक्ष उद्धरण देते समय सम्पादक, संस्करण, पदांक और उपलब्ध पृष्ठ-संख्या की पुष्टि आवश्यक है।

8.4 रसखान

रसखान के काव्य में कृष्ण तथा ब्रजभूमि के प्रति अनुरक्ति, रूप-सौन्दर्य और सांस्कृतिक आत्मीयता का विशिष्ट निरूपण मिलता है। कथक में उनकी काव्य-संवेदना ब्रज-संस्कृति और कृष्ण के प्रति प्रेम की दृश्यात्मक व्याख्या का आधार बन सकती है। प्रस्तुति में स्थानीय सांस्कृतिक संकेतों को सजावटी वस्तु के रूप में रखने के बजाय काव्यगत अर्थ और भाव-विकास से जोड़ना चाहिए। विशिष्ट पद का प्रत्यक्ष विश्लेषण करने पर प्रामाणिक संकलन और संस्करण-विशिष्ट संदर्भ देना आवश्यक होगा।

9. श्रृंगार और भक्ति का अन्तर्सम्बन्ध

कृष्ण-काव्य की अनेक माधुर्यपरक परम्पराओं में श्रृंगार और भक्ति परस्पर अन्तर्गुम्फित दिखाई देते हैं। श्रृंगार का आधार रति है, जबकि भक्ति का सम्बन्ध आराध्य के प्रति श्रद्धा, प्रेम, समर्पण और आध्यात्मिक सम्बन्ध से हो सकता है। इसलिए दोनों को सर्वथा समानार्थी मानना उचित नहीं। राधा का अनुराग कुछ भक्तिपरक व्याख्याओं में आत्मा की परमात्मा के प्रति आकांक्षा का प्रतीक बन सकता है, किन्तु यह अर्थ प्रत्येक काव्य-प्रसंग पर स्वतः लागू नहीं किया जाना चाहिए।

कथक में एक ही प्रसंग लौकिक प्रेम, मनोवैज्ञानिक विरह, सांस्कृतिक स्मृति या आध्यात्मिक समर्पण के रूप में व्याख्यायित हो सकता है। उपयुक्त व्याख्या काव्य-पाठ, संगीत, प्रस्तुति-परम्परा और कलाकार की दृष्टि पर निर्भर करती है। अतः कथक का कार्य किसी एक अर्थ को अनिवार्य रूप से थोपना नहीं, बल्कि

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

काव्य, अभिनय और दर्शक के बीच सर्जनात्मक संवाद सम्भव करना है। यह बहुअर्थकता तभी सुसंगत रहती है जब प्रस्तुति मूल पाठ और उसके सांस्कृतिक संदर्भों के प्रति सजग हो।

10. सहृदयता और रसास्वादन

रस-निष्पत्ति में कलाकार की अभिव्यक्ति के साथ दर्शक की सहृदयता भी महत्त्वपूर्ण है। अभिनवगुप्त की सौन्दर्यशास्त्रीय व्याख्या में रसास्वादन को सामान्य व्यक्तिगत भावानुभूति से भिन्न कलात्मक अनुभव के रूप में समझा जाता है। दर्शक राधा के विरह को केवल किसी निजी घटना से जोड़कर नहीं, बल्कि प्रतीक्षा, अभाव, अनुराग और स्मृति की व्यापक मानवीय संरचना के रूप में भी ग्रहण कर सकता है। भक्ति-प्रधान प्रस्तुति धार्मिक आस्था रखने वाले दर्शक के लिए आध्यात्मिक अनुभूति का माध्यम बन सकती है, जबकि अन्य दर्शक उसके साहित्यिक, संगीतात्मक अथवा नृत्यात्मक सौन्दर्य का आस्वादन कर सकते हैं। फिर भी दर्शक-अनुभव को एकरूप या सार्वभौमिक मानना उचित नहीं; उसकी व्याख्या सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, कलात्मक प्रशिक्षण और व्यक्तिगत ग्रहणशीलता से प्रभावित हो सकती है (घोष, 1950)।

11. समकालीन कथक में कृष्ण-काव्य की प्रासंगिकता

समकालीन कथक में कृष्ण-काव्य पर आधारित प्रस्तुतियाँ साहित्यिक विरासत, ब्रज-संस्कृति और शास्त्रीय नृत्य-परम्परा को जीवित रखने के साथ नई कलात्मक व्याख्याओं की सम्भावना भी निर्मित करती हैं। प्रकाश-संयोजन, मंच-रचना और संगीत-संयोजन जैसे आधुनिक साधन प्रस्तुति को विस्तार दे सकते हैं, पर उनकी सार्थकता काव्य की भावात्मक संरचना और नृत्य की अभिव्यक्तिपरक आवश्यकता के अनुरूप होने पर निर्भर है। तकनीकी आकर्षण यदि भाव और पाठ से ध्यान हटा दे, तो प्रस्तुति की सौन्दर्यात्मक एकाग्रता कमजोर हो सकती है।

काव्य-पंक्तियों का चयन मूल संदर्भ और भावार्थ को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। शृंगार के निरूपण में अनावश्यक प्रदर्शनपरकता से बचना तथा भक्ति के अभिनय में धार्मिक प्रतीकों को प्रस्तुति के वैचारिक आशय से जोड़ना आवश्यक है। विभिन्न कथक-घरानों और कलाकारों की शैलीगत विविधता को स्वीकार करना भी महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि एक ही पद अलग-अलग नृत्य-व्याकरणों, संगीत-रूपों और अभिनय-दृष्टियों में भिन्न कलात्मक रूप ग्रहण कर सकता है।

12. विश्लेषणात्मक निष्कर्ष

• कृष्ण-काव्य का कथक में विनियोग साहित्यिक अन्तर्वस्तु और नृत्यात्मक अभिव्यक्ति के बीच सक्रिय अंतःक्रिया को उद्घाटित करता है।

• संयोग और विप्रलम्भ शृंगार अलग-अलग अभिनय-रणनीतियों की माँग करते हैं; संयोग में दृष्टि-विनिमय, लज्जा, हर्ष और चपलता, जबकि विप्रलम्भ में प्रतीक्षा, स्मृति, रिक्तता और विषाद की सूक्ष्मता प्रमुख हो सकती है।

• भावाभिनय की प्रभावकारिता केवल मुद्राओं की संख्या पर निर्भर नहीं करती; विभाव, अनुभाव, संचारी भाव, लय, संगीत और देह-भाषा के समन्वित संगठन की भूमिका निर्णायक है।

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

• अंगिक, वाचिक, आहार्य और सात्त्विक अभिनय परस्पर पूरक आयाम हैं। किसी एक आयाम की अतिशयता समग्र प्रस्तुति के संतुलन को प्रभावित कर सकती है।
• शृंगार और भक्ति अनेक कृष्णभक्ति परम्पराओं में सम्बद्ध हैं, किन्तु उनकी सैद्धान्तिक तथा ऐतिहासिक पहचान को पृथक् समझना आवश्यक है।
• सूरदास, जयदेव, मीराबाई और रसखान अलग-अलग भावात्मक तथा सांस्कृतिक दिशाएँ प्रदान करते हैं; विशिष्ट पद का विश्लेषण प्रमाणित पाठ-संदर्भ के आधार पर होना चाहिए।
• सहृदयता रसास्वादन का महत्त्वपूर्ण घटक है, पर इस सैद्धान्तिक अध्ययन से किसी प्रस्तुति के प्रभाव की सार्वभौमिक या सांख्यिकीय पुष्टि नहीं होती।

13. उपसंहार

कृष्ण-काव्य के शृंगारात्मक और भक्तिपरक भावों का कथक में प्रकटीकरण भारतीय कलादर्शन की समन्वयात्मक चेतना का प्रतिनिधित्व करता है। इसमें साहित्य, संगीत, देहगत अभिव्यक्ति और आध्यात्मिक अनुभूति परस्पर सम्बद्ध होकर बहुस्तरीय सौन्दर्यात्मक संरचना निर्मित करते हैं। कृष्ण-काव्य में प्रेम, विरह, अनुराग, मान, प्रतीक्षा और समर्पण की विविधता कथक में अंगिक तथा सात्त्विक अभिनय, लयात्मक गतियों, संगीतात्मक विन्यास और संकेतपरक देह-भाषा के माध्यम से दृश्यात्मक आयाम प्राप्त करती है। भरतमुनि का रस-सिद्धान्त इस प्रक्रिया के विश्लेषण के लिए आधारभूत प्रतिमान उपलब्ध कराता है, जबकि अभिनवगुप्त की व्याख्या रसास्वादन के दार्शनिक आयाम को समझने में सहायक है। साथ ही, भक्ति-रस की उत्तरवर्ती अवधारणाओं को भरतमुनि के मूल सूत्र से ऐतिहासिक रूप से पृथक् पहचानना सैद्धान्तिक शुद्धता के लिए आवश्यक है। सूरदास, जयदेव, मीराबाई और रसखान की काव्य-संवेदना कथक को अलग-अलग भावात्मक दिशाएँ प्रदान करती है; परन्तु उनके पदों के प्रत्यक्ष उद्धरण और विशिष्ट पाठ-विश्लेषण के लिए संस्करण-विशिष्ट संदर्भ अनिवार्य हैं।

कथक में कृष्ण-काव्य की कलात्मक उपलब्धि केवल परम्परागत कथानकों के पुनरावर्तन में नहीं, बल्कि भाव की सूक्ष्मता, अभिनय की प्रामाणिकता, काव्य की अर्थगर्भिता और रसास्वादन की सम्भावना के समन्वय में निहित है। यह अध्ययन सैद्धान्तिक आधार प्रस्तुत करता है; भविष्य में विशिष्ट पदों और मंचीय प्रस्तुतियों का तुलनात्मक विश्लेषण, कलाकारों के साक्षात्कार तथा दर्शक-अनुभव पर आधारित गुणात्मक अध्ययन इस विषय की व्यावहारिक समझ को और विकसित कर सकते हैं।

संदर्भ-सूची

1. बियरनैकी, एल. (2011)। अभिनवगुप्त की रस-अवधारणा के माध्यम से तांत्रिक अद्वैतवादी नैतिकता की ओर। हिंदू अध्ययन पत्रिका, 4(3), 258–273।
2. भार्गव, टी. (2025)। आभा अथवा रस? दैनिक जीवन के सौंदर्यशास्त्र की अंतर-सांस्कृतिक अवधारणा की ओर। भारतीय दार्शनिक अनुसंधान परिषद की शोध-पत्रिका, 43(2), 155–172।

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

3. डेविड, एच. (2016)। समय, क्रिया और आख्यान: अभिनवगुप्त के सौंदर्यशास्त्रीय सिद्धान्त के कुछ व्याख्यात्मक स्रोतों का अध्ययन। भारतीय दर्शन पत्रिका, 44(1), 125–154।
4. हरमलकर, एस., एवं शर्मा, ए. (2026)। भारत की मंदिर-परंपरा के रूप में कथक नृत्य का विकास। ग्रंथालय शोध पत्रिका, 14(2), 69–73।
5. खानम, बी., एवं दरख्शा। (2024)। रस: भारतीय सौंदर्यशास्त्रीय सिद्धान्त का एक अवलोकन। सृजनात्मक शोध-विचार पत्रिका, 12(3), एल216–एल224।
6. लल्ली, जी. (2004)। उत्तर भारतीय शास्त्रीय नृत्य का एक रूप: लखनऊ घराने का कथक। दृश्य मानवविज्ञान, 17(1), 19–43।
7. ओकिता, के. (2017)। रस से भक्तिरस तक: आरंभिक आधुनिक दक्षिण एशिया में भक्तिपरक सौंदर्यशास्त्रीय सिद्धान्त का विकास। भारतीय एवं बौद्ध अध्ययन पत्रिका, 65(3), 1066–1072।
8. रैना, ए. (2019)। कथकली अभिनेता के सौंदर्यानुभव के रूप में रस की पुनर्व्याख्या। रंगमंच, नृत्य एवं प्रदर्शन-प्रशिक्षण, 10(1), 113–126।
9. सिंह, एस. (2024)। भरतमुनि के सौंदर्यशास्त्रीय रस-सिद्धान्त के साहित्यिक आयाम। पूर्व-पश्चिम चिंतन पत्रिका, 14(4)।
10. तमोशायटी, डी. (2000)। भारतीय शास्त्रीय संगीत के सौंदर्यशास्त्र में रस की अवधारणा। विल्नियस प्राच्य अध्ययन पत्रिका, 1, 183–200।